रधिया लौट आई

(ग्रामीण साहित्य माला पुष्प- 1)

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

रधिया लौट आई

लेखिका
कमला रत्नम्

सम्पादक
निर्मला दत्ता

प्रकाशक
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

प्रकाशक
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
17 बी. इन्द्र प्रस्थ मार्ग
नई दिल्ली-2

मूल्य : 3.00 रुपये

रूप सज्जा
बिमला दत्ता

पुस्तक शृंखला संख्या 118

मुद्रक
मान-हरि प्रेस
ए-३१, सेक्टर-२
नोयडा (यू० पी०)
फोन-८०५-२८०

भूमिका

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ की ओर से ग्रामीण बहन-भाईयों को ग्रामीण साहित्य माला का प्रथम पुष्प भेंट करते हुए हमें अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है। यह साहित्य माला साक्षरता की दिशा में आगे बढ़ने के लिये एक आवश्यक कदम है। वास्तव में, साक्षरता की मूल समस्या अक्षर ज्ञान प्राप्त करने के बाद की समस्या है। व्यक्ति लिखने पढ़ने में निरन्तर कुशल बना रहे उसके लिए आवश्यक है कि अक्षर ज्ञान प्राप्त कर लेने के बाद भी लिखने पढ़ने का अभ्यास जारी रखा जाए। लिखना पढ़ना जारी रखने के लिए सरल, मोहक, रोचक तथा उपयोगी पुस्तकों का होना अत्यन्त आवश्यक है। इसका अर्थ यह भी है कि लेखकों को भी यथेष्ट अवसर प्रदान किए जाएं।

जो लोग प्रौढ़ शिक्षा में रुचि रखते हैं और प्रौढ़ों को पढ़ने लिखने के लिए बढ़ावा देना चाहते हैं उनके लिए सरल, उपयोगी और रोचक सामग्री उत्पादन करना बहुत आवश्यक है। इस आवश्यकता को अनुभव करते हुए भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ ने ग्रामीण जनता के लिए साहित्य उत्पादन पर विचार विमर्श करने के लिए हिन्दी लेखकों की सहायता लेने तथा उनकी एक गोष्ठी आयोजित करने का निश्चय किया।

यह चर्चा, विचार विमर्श तथा गोष्ठी, 4 अगस्त 1978 से 6 अगस्त 1978 तक, नई दिल्ली में, आयोजित की गई। इसका उद्घाटन हिन्दी के जाने माने लेखक एवं संसद सदस्य श्री भगवती चरण वर्मा द्वारा किया गया। भारतीय ज्ञानपीठ के सचिव श्री लक्ष्मी चन्द जैन ने इसका निर्देशन किया।

जिन मशहूर लेखकों ने इस चर्चा में भाग लिया उनमें से कुछ ये हैं :—

सर्वश्री जैनेन्द्र कुमार, हरबंसराय बच्चन, प्रभाकर माचवे, रमा प्रसन्न नायक, कमला रत्नम्, राजेन्द्र अवस्थी, मन्नू भण्डारी, राजेन्द्र यादव, इन्दु जैन, बालशौरी रेड्डी इत्यादि। कुछ मशहूर प्रकाशकगण ने भी प्रकाशकों का दृष्टिकोण और उनकी समस्याएं प्रस्तुत करने की चेष्टा की। इन प्रकाशकों में से प्रमुख प्रकाशक थे सर्वश्री दीना नाथ मल्होत्रा, यशपाल जैन, कृष्णचन्द्र बेरी, रघबीर शरण बंसल, शीला सन्धु इत्यादि।

हम सभी सहयोगियों के आभारी हैं कि उन्होंने कार्यशाला को महान सफलता प्रदान की। उन चर्चाओं के आधार पर ये दस पुस्तकें भेंट करते हुए हमें हर्ष हो रहा है। हमें पूरी आशा है कि ग्रामीण जन समाज इसका खुशी से स्वागत करेगा, क्योंकि ये पुस्तकें उनके जीवन से, उनकी समस्याओं से, उनके परिवेश एवं उनकी संस्कृति से जुड़ी हैं।

हम यूनेस्को के आभारी हैं कि उन्होंने यह गोष्ठी आयोजित करने के लिए संघ को आर्थिक सहायता प्रदान की।

इस गोष्ठी में गोष्ठी के निर्देशक श्री लक्ष्मी चन्द जैन के कुशल निर्देशन एवं सूझ बूझ तथा प्रौढ़ शिक्षा की सम्पादिका श्रीमती बिमला दत्ता की लगन, मेहनत और भागदौड़ ने गोष्ठी को सफल बनाने में बहुत सहायता दी। संघ इनका भी बहुत आभारी है।

आशा है कि पाठकों को यह प्रस्तुत ग्रामीण साहित्य माला पसन्द आएगी।

शिव चन्द्र दत्ता
अवैतनिक महासचिव,

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
17-बी, इन्द्र प्रस्थ मार्ग
नई दिल्ली।
2 अक्टूबर 1978,

रधिया लौट आई

देश के करोड़ों ग्रामीण बहन-भाईयों को
समर्पित

—कमला रत्नम्

एक

"बाबू सहर से भइया के चिठी आयी गयी है। ऊ हमार नौकरी के परबंध कर लिहिन हैं।" किसना ने अपने बाप से कहा।

बाबू ने बात इस कान से सुनी, और दूसरे कान से निकाल दी। फिर उसी कान में उंगली डाल के खुजाने लगे, जैसे बात की डोर खींच के बाहर कर देना चाहते हों। किसना के बाबू की गांव में अच्छी जमीन थी। गेहूं, चना, जौ, भरपूर उगता था। थोड़ी-बहुत दालों की फ़सल भी हो जाती थी। साग-सब्जी भी मिल जाती थी। साल-दर-साल आसमान बखत पर पानी देता था। जरूरत पड़े तो पानी के लिए पुरखों का बनवाया कुंआ था। इत्ता गहरा कि झांको तो परछाई न सूझै। और पानी ठंडा, मीठा अमरित। गरमी में जब रहट चलती तो अड़ोस-पड़ोस के गंगू, हल्कू, रामदीन, कालू, मोहना, सब चले आते थे। अपने-अपने ढोर और डंगर लिए। चमड़े का बड़ा सा डोल पानी में डूब कर भारी हो जाता तो बैल तेजी से नीचे भागते। सींगों में बंधे लाल डोरे ऊपर-नीचे उड़ने नाचने लगते। गले में बंधी घंटियों की धुन दूर तक सुनायी पड़ती। गंगू, कालू, मोहना दौड़कर डोल नाली में उलीच देते। साफ़ चमकते पानी की मोटी धार नीचे गिरती। ठंडे-ठंडे छींटे चहुं ओर बयार में उड़ते और ढोर-डंगर पानी में मुंह लगा देते। गंगू और मोहना एक-दूसरे पर पानी फेंकते, फिर वहीं कुएं की जगत पर गुत्थम-गुत्था हो जाते।

हर साल ऐसा ही होता। गरमी खत्म होते-होते खेतों की तैयारी सुरू हो जाती। एक-दो जुताई करके मिट्टी खुली छोड़ दी जाती, सेंकने को। धूप में तप लेने दो। साफ-स्वच्छ हो जाएगी। पहली बौछार पड़ी कि तीसरी जुताई मेहनत मांगेगी। भूमि एकसार करके, ऊपर से मिट्टी बराबर करके छोड़ दी गयी है। मेड़ों को सुधारा गया है, खाद का परबन्ध हो गया है। फिर सब लग गये हैं बीजों की तैयारी में। किसना के बाबू ने सोचा। कैसी मेहनत मांगते हैं बीज ? हां, मेहनत भी और प्यार भी। प्यार के बिना बीज तैयार नहीं होता। और बीज उसे किसना से कम प्यारे थोड़े ही हैं। किसना की मां और वह, कई दिनों तक बीजों को साफ-सुथरा करते हैं। उन्हें धो पछोड़कर धूप में सुखाते हैं। तब कहीं उन्हें खेतों में डाला जाता है। और फिर जब बरखा की प्यारी-प्यारी फुहार गिरने लगें तो रामू, किसना, किसना की महतारी और दोनों छोटे नटखट गोलू, पोलू साथ मिलकर बीज छिटकाते हैं और धरती अपना अंग खोल कैसे गहन करती है बीजों को। सोचते-सोचते किसना को झुरझुरी हो आई। किसना के बाबू की महतारी भी तो उस बखत वैसी ही सिहर जावे है !

"बाबू हम कुछ कहिन रहा ?" किसना ने याद दिलाई तो बाबू झट से सुस्थ हुए। मुंह से चिलम निकाल भूमि पर रखी और धुंआ छोड़ते बोले, "किसना अगली गरमी तक रुक जा। रामू को घर आय लेन दे। सब बैठ कर बात करेंगे। फिर जैसी सबकी राय होगी, वैसा करना।"

रामू को सहर गये चार बरस हो गये थे। जमींदार के बेटे चंचल बाबू अपने साथ ले गये थे। कांग्रेसी कार्यकर्ता थे। कुछ बरसों से सहर में रह कर अपना प्रेस चलाते थे। वहीं सहर में चंचल बाबू की सादी भी हुई। कहां जमींदार छत्री के बेटा, और कहां वह कायथ लड़की ? बहुत गुल-गुपाड़ा मचा गांव में। पर चंचल बाबू ने किसी की नहीं सुनी, अपने मन से ब्याह कर लिया। भगवान की दया, मेहरारू अच्छी मिली। स्कूल में मास्टरनी थी, हजार रुपया माहवारी घर लावे थी। उन्हीं की सेवा के लिये रामू गया था। फिर जब रोटी-पानी की दिक्कत होने लगी, तो रामू की बहू रधिया को भी बुला लिया गया।

दो

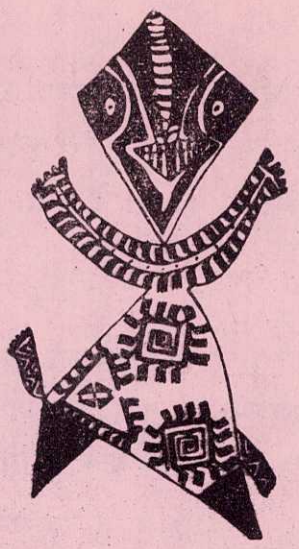

रधिया को गये अब तीन साल होने को आए। बीच में खबर आयी—किसना के बाप को पोता हुआ है, नाम रखा गोपी। गांव के पंडित ने पत्रा देखकर बताया था। अगले साल गोपी की बहन भी आ गई गिरधारी। वाह! क्या नाम रखा है? किसना के बाप ने सोचा। गिरधारी? यह कोई लड़की का नाम है? गिरधारी तो भगवान क्रेस्न का नाम है। एक बार भारी बरषा हुई। समूचो ब्रजभूमि डूबने-डूबने को हो गयी। प्रजा त्राही-त्राही करने लगी, तब भगवान क्रेस्न बिहारी ने अपनी छोटी उंगली पर पर्वत उठा लिया था। लोग जैसे छतरी के नीचे इकट्ठे हो गये थे। क्रेस्न मुरारी, हे गिरधारी।

किसना का बाप जैसे सपने से जागा, "अरे ओ किसना की महतारी, सुनती हो—गिरधारी तो लड़के का नाम है। रामू बिटिया का नाम गिरधारी कैसे धर दिहिस?"

"अरे तो गोपी कौन बेटवा का नाम बा?" कोठरी के भीतर रोटी सेंकती किसना की महतारी बोली। "क्रेस्न भगवान गोपी संग ही तो खेलत रहें।"

और फिर उसने बताया सहर में अब लड़का-लड़की का भेद नहीं रहा। लड़कियां पैण्ट-पतलून पहने हैं, पजामा पहने हैं और बाल कटावें हैं। लड़कों के बाल आंखों तक बढ़ आये हैं। केस गरदन पर झूमे हैं। फरक क्या है? देखे

चंचल बाबू और उनके बहू दोनों कमावत हैं। बहू रानी के तनखा चंचल बाबू से ज्यादा है। हमारे गोपीलाल हैं तो ई बिटिया गिरधारी देवी है। और किसना की मां ने पोता-पोती और उनके मां-बाप की याद में एक आंसू जमीन पर गिरा दिया।

फिर एक दिन रामू अपने आप गांव लौटा। गरमी के महीने उसकी आस करते ही खाली निकल गये थे। वैसे ही जैसे बरसाती बादलों की आस करते-करते पूरा जेठ का मौसम निकल जाता है। माघ का महीना था, हल्की-हल्की सरदी पड़ रही थी। खेतों में कटाई चालू थी।

"रामू, तू बहू को नहीं लाया ?" किसना के बाबू ने पूछा।

रामू ने कहा—"बापू सहर से गांव आने में पूरा दिन और पूरी रात और फिर छः घंटे लगते हैं। पूरे परिवार को लाने में तीन-चार सौ रुपये उठ जाते। रधिया खुद ही आने को तैयार नहीं हुई। चंचल बाबू तनखा ही कौन सी ज्यादा देते हैं। महीने के डेढ़ सौ रुपल्ली। हां दो बखत रोटी चाय जरूर दे देते हैं। राधा दिन भर रोटी-पानी, झाड़ू-बुहारी में लगी रहती है।

बहूरानी को भी बाल-बच्चा होने वाला है। जापे की देख-भाल, सेवा टहल रधिया ही तो करेगी। और कौन करेगा ? बच्चा होने पर चंचल बाबू तनखा बढ़ाने को भी कहिन हैं। कुल मिला कर दो सौ मिलने लगेंगे।

चंचल बाबू के आफिस में चौकीदारी खाली है। बिसबास का आदमी चाहिये। इसीलिये किसना को बुला रहे हैं।"

"किसना अभी गहराई उमर का है। मसें भीग रही हैं। गौना लाया नहीं है। सहर में जाकर बिगड़ नहीं जायेगा ?" बाबू ने पूछा।

रामू अनाज का गट्ठर बांध रहा था। बोला, "गौना लाने में कितनी देर लगे है। कल ही किसनपुर चलके गौना ले आते हैं। बहुरिया घर पर रहेगी। खेत का काम सीखेगी। किसना हमारे साथ चलेगा।"

"अरे ! हल कौन चलाएगा ? बैलों की सानी-पानी चारा ? फिर महीने छः महीने कसबे जाकर दबाई, बीज लाना, मण्डी में गेहूं पहुंचाना। खेती के कोई एक काम थोड़े हैं ?" बाबू ने कहा।

"अरे, ये गोलू-पोलू किस काम आयेंगे ? पाठशाला जाकर हाजरी भरते हैं, और फिर मास्टर के सामने बस्ता पटक दिन भर को गायब । अमराई में पेड़ पर बैठ कर बांसुरी बजायेंगे, पानी में नहायेंगे, नहर किनारे झाड़ियों में बेरी ढूढ़ेंगे । दोपहर बाद सूखी लकड़ियां बटोरेंगे और तीसरा पहर होते-होते फिर स्कूल में हाजिर । लकड़ियों का गट्ठर मास्टर जी के आंगन में, और गोलू-पोलू बस्ता सिर पर रखे घर वापिस । घर में अम्मां रोटी सेंक कर रखे हैं, गरम-गरम खिलाएंगी अपने लालों को । अरे यह पढ़ाई-वढ़ाई बेकार है । पढ़ाई क्या है, मास्टर जी की गुलामी है । वह भी मुफ़्त में ।

बाबू ! गोलू-पोलू को कान खींच कर घर बैठा लो । कल से किसना के छुट्टी । गोलू-पोलू बैलों का दानापानी करेंगे, हल चलाएंगे । दसहरा घर बैलगाड़ी-दौड़ में तो आगे धावत हैं । खतम हो गए उनके खेल के दिन । अब बाबू कान पकड़ के उनिका काम में लगाओ ।"

इस तरह की बहुत सी बातें कह कर एक दिन रामू किसना को लेकर सहर चला गया ।

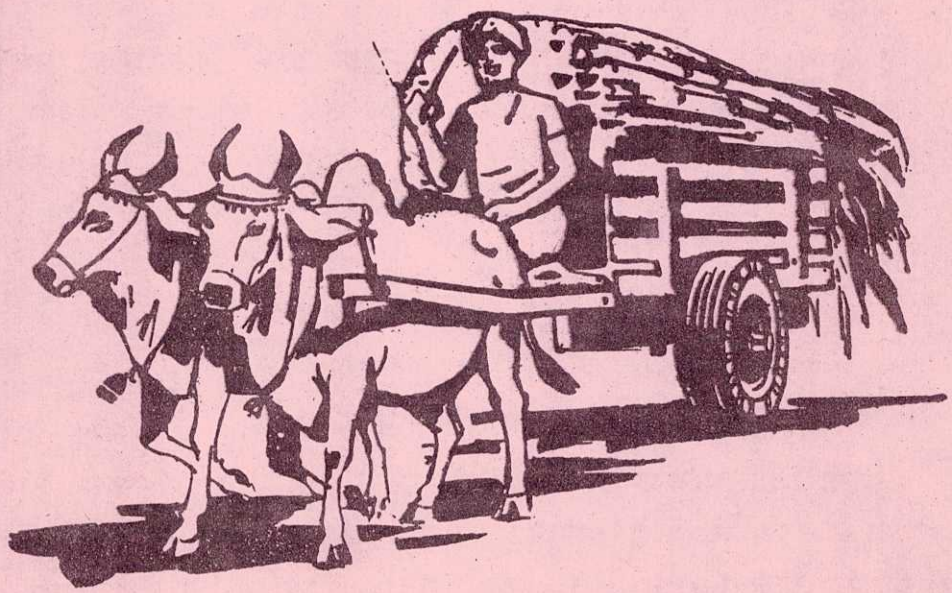

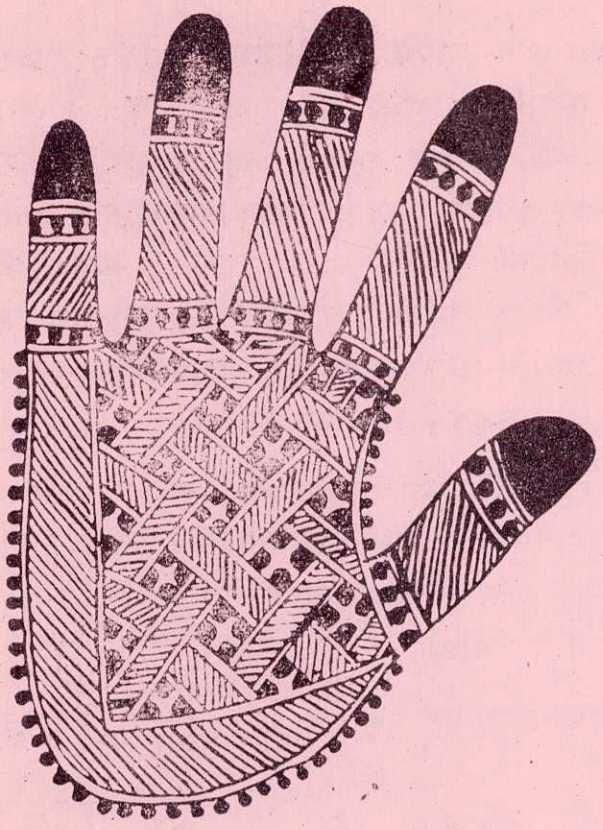

तीन

किसना को नयी-नवेली दुलिहन गौना करके घर लायी जा चुकी थी। हाथों की मेंहदी नहीं उतरी थी कि उसके जिम्मे किसना के सब काम। दुलहिन छठी क्लास पढ़ी थी। मां ने साथ में रामायण पोथी, भजनावली और स्त्री-स्वास्थ्य की किताबें कर दी थीं। रात को भगवान जी की मूरत के आगे दीपक जलाती और सास-ससुर को रामायण की चौपाई पढ़कर सुनाती——

जेहि सुमिरत सिधि होइ, गन-नायक करिबर बदन।
करउ अनुग्रह सोइ, बुद्धिरासि सुभ गुन-सदन॥

धीरे-धीरे दुलहनियां ने किसना के घर में अपनी जगह बना ली।

बीतते-बीतते पांच-छः साल और बीते। कभी-कभार किसना की चिट्ठी आ जाती। लिखैये से लिखाई हुई। रामू तो खैर अनपढ़ था। किसना पढ़ना लिखना सीख गया था। कस्बे का अखबार 'नवप्रभात' बांच लेता था, मामूली हिसाब-किताब लिख लेता। सबसे बड़ी मदद बाबू को जो उससे थी

वह यह कि नयी चली दवाईयों के नाम लिख लेता था। बीजों के नाम उसे याद रह जाते थे। सोना एक नम्बर। कल्याण तीन सौ चालीस। पूसा पांच। भला हो इन सहर वालों का सारे नाम अंगरेजी में। अंगरेज तो चले गये थे, गांधी बाबा के आन्दोलन से। अब क्यों अंगरेजी ? किसना का बाबू सोचता, परन्तु उसे इस प्रश्न का जवाब न मिलता। जवाब की जरूरत भी नहीं थी। क्योंकि दुलहनियां अब किसना से ज्यादा मुस्तैदी से सब-कुछ लिख पढ़ सकती थी। किसना का बाबू कभी-कभी उसकी मेहनत और मुस्तैदी देखकर अचरज में रह जाता। किसना तगड़ा जवान था। मेहनत करता तो थाली भर खाता भी था। मगर ये दुलहनियां। कैसी कोमल, नाजुक गुड़िया सी है। खुराक मरद से आधी और काम मर्द से दूना। ऊपर का खर्चा कुछ नहीं। बचत ही बचत है। रामू और किसना दोनों पांच-दस रुपये तो सिगरेट-बीड़ी में ही फूंक देते हैं। उस दिन पीहर से भाई लेने आया तो नहीं गयी। बोली—"बाबू अकेले हैं। उन्हें सहर से लौट लेने दो भय्या। तब ले जाना। भगवान ने एक ननदिया भी तो नहीं दी, जो बेर-अबेर मेरी एवजी कर लेती। भय्या, मेरा भाग अब यहीं है, जहां तुम पंचन ने हमें भेज दिया।"

किसना जब से शहर गया, लिखने-पढ़ने की छुट्टी हो गयी। रात-रात भर घूम कर पहरा देता। बीच में पड़ोस के चौकीदारों के साथ बैठकर गांजा-सुलुफ पीता। सवेरे आठ बजे ड्यूटी खतम कर लम्बी तानता। देर दोपहर बीते आंख खोलता तो, "भौजी ! खाना।" और रधिया की बनाई रोटी खाकर, नयी सिलाई पैण्ट पहनता। बाल काढ़ता। औरतों जैसी पटिया बनाता और निकल पड़ता मटरगश्ती पर। चलते वक्त जेब में सिगरेट की डब्बी खोंसना न भूलता। कभी सिनेमा. कभी आवारागर्दी, कभी तास-पत्ता। जुआ ? हां, जुआ खेलता। दोपहर के वक्त सहर में सभी बाबू लोग तास पत्ता खेलते हैं। नहीं तो सरकारी तनखा में कहीं गुजारा होता है ? रामू ने आज तक एक पैसा घर नहीं भेजा। उलटे जब भी घर से आया, साल भर का चना-चबेना गांठ बांध कर ले आया। गुड़ और आटे के लड्डू, तिल-बड़ी तो अम्मां देती ही थीं। किसना पहले साल भर तो भेजता रहा। फिर छः महीने में एक दफा। धीरे-धीरे आज तीन साल होने को आये। मनिआर्डर क्या एक कारड तक नहीं आया।

चार

भगवान की किरपा थी कि गोलू-पोलू बड़े हो गये थे और बैल-जोड़ी का काम सम्हाले थे। बाबू बुढ़ा गये थे, नजर कमजोर हो गयी थी और हाथ पैर में दर्द रहने लगा था। अकेली दुलहिन लच्छमी जैसी घर को सम्हाले थी। जैसे राम-लछिमन बनवास चले गये तो पीछे लखन लाल की दुलहिन ने घर सम्हाला। उर्मिला रानी घर न सम्हालतीं तो तीनों सास भूखी मर जातीं, भूखी। भरत जी तो राजपाट छोड़ अजुध्या जी के बाहर धूनी रमाये थे। सासों को कौन देखता ? अरे, सास एक हो तो सम्हालना मुस्किल है। फिर तीन-तीन, उनमें भी एक केकयी जैसी। उर्मिला रानी बड़ी बहादुर सती थीं जो अकेली सम्हाल ले गयीं। किसना की अम्मां यही सब सोचती और दुलहिन को असीस देती।

रात को सब काम खतम कर जब भगवान के आगे दीप जलता और दुलहिन रामायण लेकर बैठती तो गोलू-पोलू पास आकर बैठ जाते। "क्यों देवर, बैलों का दाना-पानी हो गया ?"

"भौजी, आज सारी कुट्टी मैंने काटी है।" गोलू बोलता।

"और भूसे में खली मिला कर सानी मैंने लगाई है। और भौजी, तुमने सबेरे आटे-बेसन का चोकर दिया था, उसे मैंने गऊ माता को खिला दिया। गाभिन हैं। जब प्यारी-प्यारी बछिया जनेंगी, तो घर में दूध की धारा बहा देंगी।"

'बहुत अच्छा किया गोलू और पोलू !" दुलहिन कहती, "गांव में नया

कृषि केन्द्र खुला है, जहां खेती और पशुपालन की नयी बातें सिखाई जाती हैं। सोचती हूं अम्मां से कहूं कि तुम दोनों दिन को वहां चले जाया करो। सबेरे पशुओं की देख-भाल खतम करने के बाद तुम दोनों जा सकते हो। बाबू के साथ मैं खेत पर काम कराऊंगी और अम्मां पशुओं को चरा लायेंगी।"

यह बात सबको पसन्द आ गयी। और तय हुआ कि होली की फ़सल कटने के बाद गोलू-पोलू कृषिकेन्द्र जाकर शाक-वाटिका और मुर्गी-पालन सीखेंगे। कुल छः महीने की पढ़ाई है। बीच-बीच में दुलहिन भी जायेंगी। वे लकड़ी के खोखों में मधुमक्खी पालन सीखेंगी।

किसना के बाबू ने मकान की छत पक्की करा ली है। वहीं दीवाल के सहारे सीढ़ी लगाकर छत पर मधुमक्खियों का इन्तजाम होगा। बांस की दीवार और फूस का छप्पर ही तो डालना है। वैद्यजी कितनी दूर से शहद लाते हैं दवाइयों के लिये। पिछली दफ़ा लाये तो कितना परेशान थे। बोतल में ऊपर-ऊपर तो शहद था, नीचे बूरा का शीरा भरा था। फिर दवा असर करे तो कैसे ?

दुलहिन शहद बनाएंगी तो होगा पक्का। सोलहों आना सुध। घर में बखत-बे बखत काम आयेगा और वैद्यजी खरीदेंगे सो अलग। हां, खुद आकर देख लेंगे, छत्ता उन्हीं के सामने चुआऊंगी। शहद चुआने के बाद मोम भी तो बचेगा। रात-बिरात बत्ती जलाने के काम आयेगा। गांव की बिजली का क्या भरोसा ? बरसात की धूप है। छिन में उजाला छिन में अंधेरा।

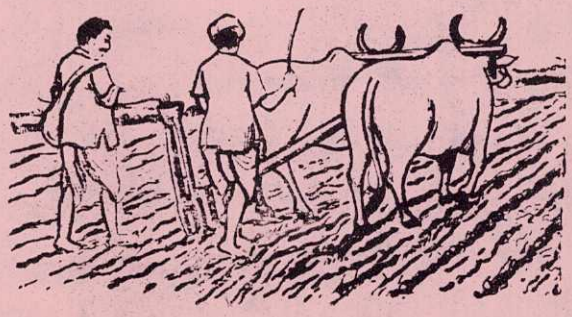

पांच

देखते-देखते होली आयी। फाग के रंग की धूम मच गयी। गोलू-पोलू ने भाभी के ऊपर टेसू के पत्तों के रग की बालटी उलट दी। बेचारी भीगा अंग समेटती भीतर भाग गयी और अम्मां की कोठरी में घुस गयी।

होली के मौसम में जब गांव के गोरे-गोरी मिलकर रंग खेलते, अबीर उड़ाते, फाग गाते, तब न जाने दुलहिन का मन कैसा-कैसा होने लगता। मन ही मन किसना याद आने लगता। कितना तगड़ा खूबसूरत जवान था। गले में काली कण्ठी। जिसमें सोने की गुरियां पिरोई हुई थीं। बढ़ी-बड़ी आंखों में लाल लाल डोरे, ऊपर से काजल और कानों में बालियां। बिदाई के समय अम्मां ने पहराई थीं।

चलती बेर किसना ने बालियां उतारीं। औरत के पास कोई तो निसानी छोड़ जानी चाहिए। बाली पहनाते समय दुलहिन का गाल उसकी छाती से छू गया था। अचानक किसना तो छिटक कर अलग हो गया था। जैसे उसे बिजली का तार छू गया हो। मगर दुलहिन के गाल में तो आग जल पड़ी थी। तभी अम्मा ने पुकारा था, दुलहिनियां। ई लड्डू बन गये हैं। ले जाव, रामू-किसना की गठड़ी में बांध देव और वह दौड़ी-दौड़ी अम्मां की कोठरी में घुस गयी थी—और अँधेरे में कुछ देर दुबकी पड़ी थी। बहुत देर बाद जब गाल की आग बुझी, तभी बाहर आयी। किसना चला गया था।

साल पर साल बीते। किसना नहीं आया। यह होली निगोड़ी एक बार चली जाए तो फिर न आये। कैसी बेशरम है। साल बीता नहीं कि फिर अपने समय पर हाजिर। जैसे कोई बिन बुलाया मेहमान हो। पूरे साल

में होली ही एक ऐसा मौसम था जब दुलहिन को तकलीफ़ होती। मन काबू से बाहर हो जाता। मगर दुलहिन भी लोहे की बनी थी। जल्दी ही घर के काम-काज में रम जाती। मुर्गियों, गाय-बैलों की देखभाल खुद करने लगती। और होली की लगाई आग अपने आप बुझ जाती।

गरमी भर फिर बरखा के आने की तैयारी चलती रही। गोशाला का छप्पर बदलना था, मुर्गियों के दड़वे ठीक करने थे। एकाध जगह छत पानी देने लगी थी। गोलू-पोलू से चूने और गोबर-मिट्टी से भराई करानी थी। बारिश में मधुमक्खियों के लिए साये में परबन्ध करना था। गरमियों के तपते महीने इस साल चुटकी बजाते निकल गये। और फिर आयी बरसात, गरजती बादल कड़काती। पहले तो तपती झुलस के बाद नन्हीं-नन्हीं बुंदियां अच्छी लगीं। दुलहिन गांव की बहुओं के साथ गाने लगीं–

झुलवा डारूं मैं अंबिया की डार !
अंबिया की डार, हां अंबिया की डार !
सास मेरी झूलै, ननद मेरी झूलै !
सैयां मोरा झूलै, गले में बइयां डार !
झुलवा डारूं मैं अंबिया की डार !

दुलहिन पीहर की बातें सोचने लगी थी। गोरी को अंबिया की डार में ही काहे को झुलवा डालना है ? पीहर में एक दिन वह नयी-नवेली भौजी से पूछ बैठी थी। साथ में पक्के-पक्के आम जो खाने को मिले हैं, ननद जी ! ससुराल जाओगी तब तुम भी चखोगी। भौजी उसे चिढ़ाती हुई बोली थीं। और तभी जोर से बिजुरी कड़की और घनघोर वर्षा होने लगी। जैसे बादल फट कर भूमि पर गिर पड़ेंगे।

सुना है सहर में नया स्वास्थ्य-मन्त्री आया है। वह गांव का भी दौरा करेगा। पाठशाला, स्कूल का निरीक्षण करेगा। सुनते हैं नया मन्त्री बड़ा दयालू है। गांवों में दवाई का परबन्ध होगा। गांव से ही किसी नौजवान को साल-दो साल सिखाया जायगा। फिर वह पाठशाला में या डाकखाने के पास एक कमरे में दवाई खाना खोल लेगा। अभी तो जरा से जूड़ी-बुखार के लिए

१५ मील कस्बे में जाना पड़ता है। और राम न करे कहीं हड्डी टूट गयी तब तो और मुश्किल। पिछले साल छत की सीढ़ी पर से पोलू गिर पड़ा था और पांव की हड्डी टूट गयी थी। बैलगाड़ी से कस्बे के अस्पताल तक जाते-जाते दो दिन लग जाते। ऐसी ही बरसात लगी थी, पैर फिसल गया था। बैल भी कैसे चलते इस कीचड़ में। तब गोलू हिम्मत कर पोलू को साइकिल के पीछे बैठाकर ले गया था और वहां से पट्टी करवा के ही लौटा। पट्टी भी कैसी। बाप रे! लकड़ी रख कर पट्टी बांधी थी। फिर चूने के पलस्तर से ढक दिया था। पूरे दो महीने लगे थे हड्डी जुड़ने में।

इस बीच दुलहिन ने हिम्मत करके गोलू से कहा था। "अरे ओ बचवा बाबू। तनी हमहूं का साइकिल की सवारी सिखाय दे औ।" "भौजी तुम। साइकिल सीखोगी? गांव वाले क्या कहेंगे?" कहेंगे क्या? "जरूरत होगी उनको भी सिखा देंगे। साइकिल की ही सवारी है, कोई शेर की सवारी तो नहीं। आज पोलू गिरे तो तुम ले गये। कल किसी और को जरूरत हो और ले जाने वाला न हो तो हम तैयार तो रहि बै।" दुलहिन की बात बाबू ने मान ली। कैसे न मानते। आखिर किसना के जाने के बाद से किसना से दूना काम कर रही थी दुलहिन। कैसी सुघड़-सयानी थी। दोनों देवर आगे-पीछे घूमते थे। एकको दिन मरद का सुख नहीं देखा। मगर चेहरे पे छाया नहीं आने देती। हर समय हंसमुख, प्रसन्न। इसके मारे रामू और किसना दोनों का दुख भूल गये हैं बाबू। पाकी उमरिया है उनकी। हाथ पैर कम चलते हैं उनके। दुलहिनिया ही अब उनकी रामू है, उनकी किसना है। बाबू के मानने की देर थी कि दुलहिन ने साड़ी की लांग चढ़ाई, फेंटा कसा और गोलू की बांह पकड़ साइकिल पर सवार हो गयी। पूरे खेत का चक्कर लगा कर ही लौटी।

ग्राम-डॉक्टरों के लिये जब बुलाहट हुई तो सबसे पहले पोलू आगे आया। छुटपन के खेल छोड़ दोनों भाई दसवीं पास कर चुके थे। अब आगे पढ़ने के लिये कस्बे के अस्पताल में जाना था। सो पोलू ही जायेगा। गोलू घर पर मदद करेगा। आखिर एक मरद बेटा घर में भी रखना चाहिये।

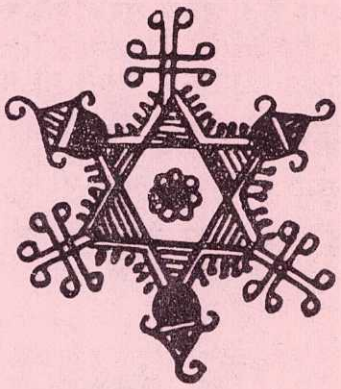

छः

एक दिन शाम को दिया जलने का समय था। पोलू के चले जाने से थोड़ी सी उदासी थी। घर में कुछ खाली-खाली सा था। जैसे किसी का कुछ खो गया हो। बाबू, अम्मां, दुलहिन और गोलू धूप जलाए रामायण पाठ कर रहे थे कि पड़ौस में खलबली मची। रधिया लौट आयी। सहर से अकेली आयी है। साथ में गोपी, गिरधर भी हैं। कितने बड़े हो गये हैं, गोपी-गिरधर! गोपी ग्यारह का हो चुका है, गिरधर को दसवां लगा है। पन लगते दोनों बराबर हैं। क्यों नहीं, लड़कियां जल्दी तो बढ़ती हैं। कैसे अपनी अम्मां की सहायता कर रहे हैं। गोपी हाथ में छोटा टीन का बक्सा उठाए हैं। गिरधर खाने की पोटली सम्हाले हैं। रधिया के सिर पर कपड़ों की गठरी है। ढाई मील दूर बस ने पक्की सड़क पर छोड़ा है। वहां से पैदल आते-आते तीनों के मुख सूख गए हैं। चेहरे पर धूल जम गयी है।

बारह बरस बाद अपने गांव को देख रही है रधिया। कित्ता बदल गया है। नये घर बन गये हैं। मन्दिर के शिखर पर पीतल का कलश लग

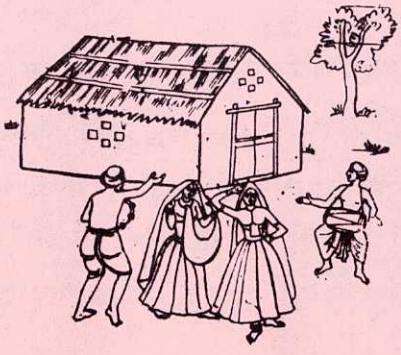

गया है। डूबते सूरज की रोशनी में कैसा चमकता है। जैसे असली सोना हो !

गांव में घुसते ही पाठशाला दिखाई दी। बरगद के नीचे, ठीक जैसे पहले थी। नहीं, कुछ कमरे और जुड़ गये हैं। और बरगद भी बुढ़ा गया है। उसने और डारें फेंक दी हैं। फिर स्कूल, फिर ग्राम-सेवक का दफ्तर। बीच की सड़क पर ईटें जड़ दी गयी हैं। दोनों ओर से ढलाव काटा गया है।

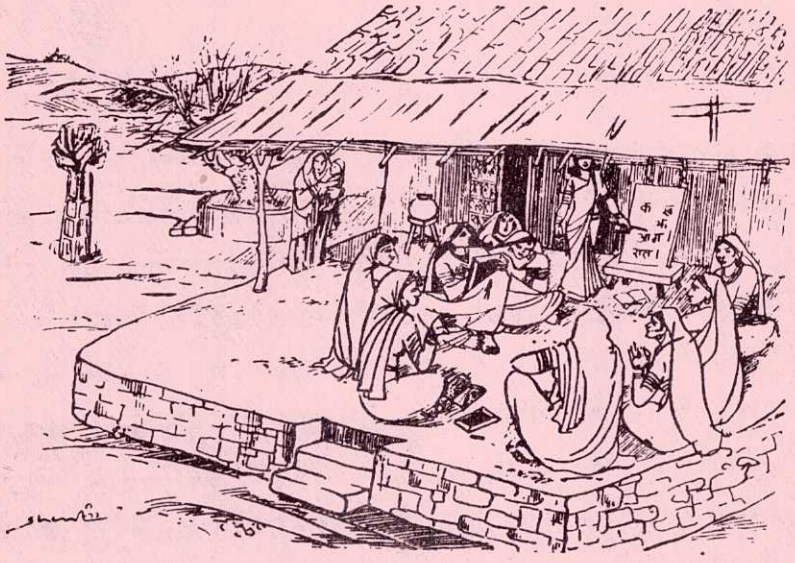

बरसाती पानी अब ढरक कर दोनों ओर बह जाता है। चलने को सूखी जमीन मिल जाती है। दुकानों के नीचे पक्की नाली है। सीढ़ियां बनी हैं। उन पर से होकर दुकान पर चढ़ते हैं। आखिर पूछ-पूछ कर रधिया घर पहुंची। द्वार में घुसते ही आंसू की झड़ी लग गयी। एक बरसात बाहर एक बरसात भीतर। आंचल मुंह पर रख रोकती है अपने को। लेकिन रुलाई है कि फूटती ही चली जाती है। अरे आंचल के रोके कभी बरसात रुकी है जो अब ही रुक जायेगी। धूप जलाए पूरा परिवार बैठा है, दुलहिन पोथी बांच रही है।

अनसुइया के पद गहि सीता, मिली बहोरि सुसील बिनीता।
रिषिपतिनी मन सुख अधिकाई, आसन देइनिकट बैठाई॥
अमित दानि भर्त्ता बयदेही, अधम सो नारि जो सेव न तेही।
धीरज धर्म मित्र अरु नारी, आपद काल परखिये चारी॥

गुसांई जी के बचन हैं। रामायण-कथा चल रही है। ठीक है, पति अन्धा हो, बहरा हो, क्रोधी हो। औरत के लिए सेवा करना ही ठीक है। गरीब हो तो भी चलेगा। पर दिल का गरीब तो न हो। गुसांई जी ने उसके लिये कुछ नहीं कहा। मरद अगर दूसरी से दिल लगा बैठे तो औरत क्या करे ? इसके आगे रधिया कुछ और न सोच सकी। तीर की तरह कोठरी में घुसी। सास के पांव छूते ही फूट-फूट कर रोने लगी। मन का बांध इतने दिनों से बन्द था। आज अपनों को देख टूट पड़ा।

किसना की मां हड़बड़ा कर उठी। बहू को असीसा। पोता-पोती को प्यार से सिर पर हाथ फेर अपने पास बैठाया। थोड़ी देर सब बैठे चुपचाप रोते रहे। रात को खाना पीना हो चुका, तो किसना की महतारी ने पूछा, "का भवा उहां ? बहू ! कैसे तू चली आयी अकेली ? न खत न खबर ? रामू तो संदेसा भी न भेजिन ?" और तब रो-रोकर रधिया ने अपनी बिपदा सुनाई।

सहर में पहले चार-पांच साल तो अच्छे कटे। अच्छे क्या, बस ठीक-ठाक। सबेरे छः बजे जब काम पर जाती, तो दिया जले अपनी कोठरी में लौटती। बीच में एकाध घण्टे की छुट्टी जरूर थी। फिर काम भी तो तगड़ा था। सहर का बंगला, कोठी बगीचा। कुत्ते, बिल्लियां, मेहमान। रामू और रधिया ही तो सब देखते थे। गोपी, गिरधर छोटे-छोटे थे तो खिला-पिला कर घर छोड़ जाती। पड़ोस में सिमलाल चपरासी रहता था। पन्द्रह मील दूर किसी कालेज में नौकर था। सबेरे सात बजते-बजते जो ड्यूटी पर

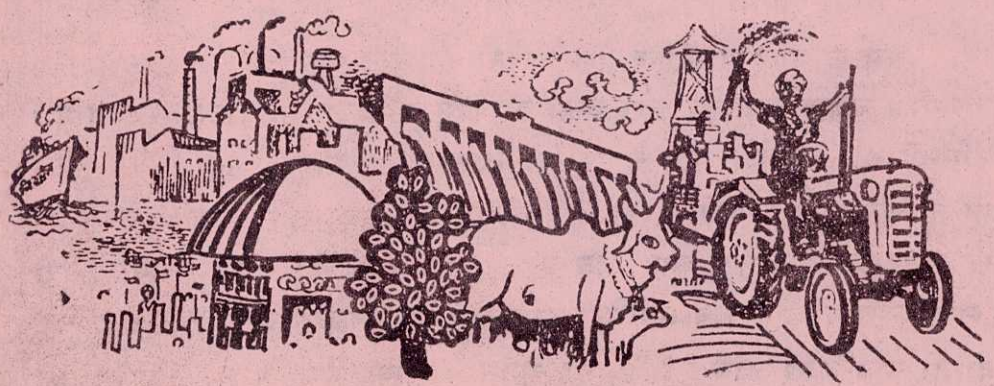

निकलता तो फिर शाम सात बजे आ पाता। उसकी बीबी दिन भर घर पर बैठी मक्खियां मारा करती। सादी को सात साल बीत चुके थे। अभी तक बच्चा पेट में नहीं आया था। बड़े अस्पताल में खूब इलाज कराया। ले दे कर अब वह मां बनने वाली थी। डाक्टर ने बहुत चलने-फिरने को मना किया था। सिमलाल ने औरत की मदद को अपनी साली मेरी को बुला लिया।

मेरी सोलह बरस की जवनियां थीं। थोड़ा-बहुत पढ़ना-लिखना जानती थी। रधिया जितनी देर काम करती, दोनों बहनें मिल कर बच्चों को सम्हालती थीं। बदले में रामू कभी फल, कभी दूध, कभी रोटी लाकर दे दिया करता। रधिया ने भी रामू का कुरता फाड़ कर आने वाले बच्चे के लिए झबला सीकर रख लिया था।, आंसू पोछती हुई रधिया बोली–अम्मां मेरे करम फूट गये थे जो सहर गई। गोपी के बाबू सिमलाल की साली पे ऐसा रीझे कि दिन-दहाड़े मुलाकात करने लगे। मैं दिन भर काम में लगी रहती। चंचल बाबू और मेम साहब सबेरे काम पर निकल जाते। और वह निगोड़ी मेरी उनकी इंतजार में बैठी रहती। चट दोनों बच्चों को खिलाने के बहाने बगीचे में निकल जाती। ये भी चुपचाप पिछाड़ी से निकल आते। दोनों माली की कोठरी के पीछे बैठे घण्टों बतियाते। कच्चे अमरूद, आम, नींबू तोड़ कर खाते। बहुत दिनों तक तो रधिया को इसका पता ही न चला। एक दिन दुपहर को कोठरी में सोयी थी तो सुना चपरासी की बीवी मेरी को बुरी तरह फटकार रही है। "कहां चली जाती है दिन भर हरामजादी ? हमने तुझे मदद के लिए बुलाया है, या सारा दिन मौज मारने के लिये ? आने दे तेरे जीजा को, अभी तेरी पोल खुलवाती हूं।"

भूसे के नीचे आग कब तक छिपती ? बात एक दिन बिलकुल बाहर आ गयी। चंचल बाबू को पता चला तो रामू को बुलाया, डांटा, फटकारा। सरमिन्दा भी किया। मेम साहब भी चिल्लाई। कानून पढ़ी-लिखी थीं। काहे न चिल्लातीं ? लेकिन रामू, वह तो टस से मस नहीं हुआ। मूरत की तरह खड़ा देखता रहा। चुप ! जब बहुत पूछा तो बोला, "साहब मैंने मेरी से सादी कर ली है। अब यह मेरे घर रहेगी। रधिया चाहे तो यहां रहे, नहीं तो गांव चली जाय !" इतना सुनना था कि मेम साहब ने रामू की

छुट्टी कर दी। अगले दिन सबेरे वह घर छोड़कर चला गया। उधर मेरी भी घर से गायब थी।

रधिया बोली, "मैं क्या करती, अम्मां! घर आकर उस दिन ये मुंह लपेट कर पड़ गये। सारी रात पड़े रहे। न अन्न न पानी। मैंने बोलने की बहुत कोसिस की। लेकिन इन्हें न बोलना था तो नहीं ही बोले। सारी रात जागते बीती थी। सबेरे के पहर जरा आँख लगी थी। भोर भये तो देखा, घर का सामान उलटा-पुलटा पड़ा है और दरवाजा खुला पड़ा है। गोपी के बाबू हम सब को छोड़ कर चले गये थे। कई दिन इंतजार किया। सोचा गुस्सा ठंडा पड़ जायेगा तो अपने-आप लौट आयेंगे। चंचल बाबू ने भी बहुत कोसिस की। लेकिन इन्हें न मिलना था तो नहीं मिले। अम्मां, फिर अकेली मैं क्या करती? बच्चों को लेकर तुम्हारे पास चली आयी।" कहते-कहते रधिया फिर रो पड़ी।

"बहू, तुझे हमें तो खबर करनी थी? हम तेरी मदद को जो आ जाते। बाबू बोले। फिर एक दम से अपना ही माथा ठोक कर बोले, "हाय रामू! क्या तेरी मत मारी गयी थी? यही दिन देखने के लिये हमने तुझे पैदा किया था!" "अरे किसना ने भाई को नहीं रोका? किसना कहां था, किसना?' मां चिल्लाई।

"किसना? कहां किसना? देवर जी तो जाने कब से घर छोड़ गये थे। जुए में कर्जा इतना हो गया था कि लोग एक पल चैन से बैठने नहीं देते थे। वे भी एक दिन जो घर से निकले तो फिर लौट कर नहीं आये।"

बुढ़िया मां पर तो बिन बादर बिजुरी गिरी। एक साथ दो-दो बेटों के सर्वनाश की कहानी सुन रही थी। थोड़ी देर सब ऐसे बैठे रहे जैसे सब पर बिजली गिर पड़ी हो। आखिरकार अम्मां ही बोलीं, "दुलहिन चलो आरती गा लो, फिर उठें।"

परन्तु वहां कहां दुलहिन थी? किसना के चले जाने की खबर सुनते ही वह कोठरी के भीतर भाग गयी थी। वहां अकेली हाथों में मुंह छिपा, अपने भगवान के सामने रोकर कह रही थी, "हे भगवान्, जुआ ही तो खेलते हैं। कोई दूसरी औरत तो नहीं है। तुम चाहोगे, तो एक दिन वे जरूर मुझे मिलेंगे। वे घर वापस लौट आयेंगे।"

सात

रधिया के लौटने की खबर किसना की ससुराल भी पहुंची। दुलहिन का भाई सारी कहानी सुनकर गुस्से से पागल हो गया। दुलहिन उसकी पीठ की छोटी बहिन थी। घर भर की दुलारी। उसका दुःख कैसे सहा जाय। कैसी-कैसी बातें बना कर किसना की गैरहाजिरी की सफाई दिया करती थी। असली बात अब खुली है।

रधिया को आये तीन-चार दिन ही हुए थे कि दुलहनियां का भाई आ पहुंचा। आते ही अम्मा से कहा, "बहन को विदा कराने आया हूं।" अम्मा ओसारे में थीं। दुलहिन कोठरी के भीतर गोपी-गिरधारी को स्कूल भेजने की तैयारी कर रही थीं। भय्या की आवाज सुनते ही समझ गयी। खबर उसके पीहर पहुंच चुकी है। बच्चों को स्कूल भेजकर, दुलहिन बाहर आयी। भय्या से मिली। माता-पिता की घरवालों की कुसल पूछी।

"तैयारी करो, और मेरे साथ चलो।" भय्या ने गंभीर मुख से कहा। "हम ऐसी बेइज्जती नहीं सहेंगे। कोरी हंडिया के गाहक बहुत हैं। हम तेरे लिए दूसरा बर ढूंढेंगे।"

दुलहिन ने भय्या के बचन सुने तो कानों को हाथ लगाया। 'ना, भय्या ऐसा मत बोलो। ईमानदारी की बात और भले घर की बेटी, एक ही बेर दी जाती है। एक बेर दे दी, फिर वापस नहीं लौटती। भइया, मेरे भाग में यही घर लिखा था। अम्मां, बापू को छोड़ कर मैं नहीं जा सकतीं। सुख के दिन जब इहां बिताये, तो अब दुःख की बेर चली जाऊं ? ना, भय्या। यह मुझसे नहीं होगा। और भय्या जितना सुख किस्मत में होता है, चाहे जहां रहो, मिल जाता है। तुम लोग मेरे लिए दुख उठाओगे, दूसरा बर लाओगे ? इसकी जिम्मेदारी कौन लेगा कि वह भी बुरा नहीं निकलेगा ? भय्या, एक पेड़ के सब फल बराबर नहीं होते, तो दूसरे पेड़ के सब फल अच्छे होंगे ? कौन कह सकता है।"

भय्या ने देखा कि दुलहिन बड़े शान्त भाव से यह सब कह रही है। उसके मन में कहीं कुछ सन्देह नहीं है। उसका मन बिल्कुल पक्का है। 'अच्छा, तेरी जैसी मरजी। मगर देख जब भी तू चाहेगी, मैं तुझे आकर ले जाऊंगा। भूलना मत, बहिनी।'

घंटा-दो-घंटा ठहर कर भय्या चला गया। बाबू-अम्मां ने बहुत कहा। वह किसी तरह रुकने को तैयार नहीं हुआ। दुलहिन भाई को बिदा कर काम में लग गयी।

किसना के बाबू और अम्मां के सामने अब दूसरा उपाय ही क्या था। भगवान का लाख सुकर है कि रधिया अपनी इज्जत बचाये घर आ गयी थी। और घर की लच्छमी घर में ही थी। दुलहिन की समझदारी देख कर अम्मां ने भी हौंसला रखा था। जेठानी और बच्चों को वह सम्हाल लेगी। और सच में दुलहिन गोपी और गिरधर को देख कर बहुत खुश हुई थी। अगले दिन ही उसने दोनों बच्चों को अपने हाथ से उबटन मल कर नहलाया था। गोपी को धुले कपड़े पहनाये थे। तेल लगाकर गिरधर की चोटी गूंथी थी। फिर माथे पर काजल की छोटी-छोटी बिन्दी लगा कर दोंनों को स्कूल भेज दिया था। गोलू चाचा जाकर दोनों का नाम लिखवा आये थे। अच्छा हुआ जो रधिया जीजी बरसात में आ गयीं। गरमी की छुट्टियों के बाद अभी स्कूल खुला है। तभी तो जगह मिल गयी। अब तो

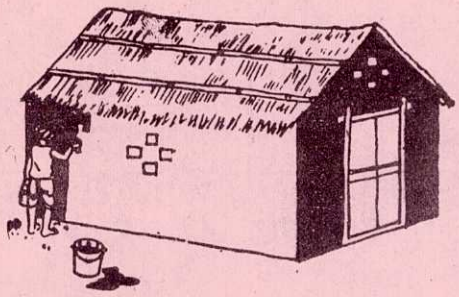

गांव में सब बच्चे पढ़ते हैं। जगह इतनी आसानी से नहीं मिलती।

रधिया कुछ दिन तो अपने दुख को याद करती गुमसुम पड़ी रही। धीरे-धीरे जब तबीयत सुधरी, तो एक दिन दुलहिन ने ही कहा, "जीजी, अब तुम भी उठो। कब तक सोग मनाओगी? जितना सुख भाग में लिखा हो, उससे ज्यादा कहां से मिलेगा? जीजी, तुम्हारे पास तो जेठ जी की निसानी, ये दोनों बच्चे हैं। मेरे पास क्या है? छन भर की याद के सहारे जी रही हूं। अम्मां-बाबू को देखती हूं तो सच मानो जीजी, मन्दिर के उस पीपल की याद आ जाती है। कितना मोटा, चिकना उसका तना है। आदमी की ऊंचाई से उसमें से चार शाखें फूटी हैं। दो तो सीधी बीच से उठती चली गयी हैं। जब की दो टेढ़ी-मेढ़ी बाहर को फैल गयी हैं। जीजी, बीच की दो शाखें गोलू-पोलू हैं, जो अभी तक हमारे पास हैं। बाकी पहली दो शाखें जेठ जी और ये हैं। बड़े थे, पहले बाहर निकल गये। और जमाने की हवा उनको लग गई। मगर देखो जीजी, पीपल का पेड़ तो कहीं नहीं गया। अम्मां-बाबू आपस में जुड़े वैसे ही खड़े हैं। जीजी वो ही अब हमारा

साया है, हमारा तना है। वह शाखें जो गलत रास्ते पर चली गयीं, उनकी जगह अब हमीं तो लेंगे। हमीं उनका सहारा हैं।" फिर लम्बी सांस लेते हुए बोली, "जीजी, दुनिया में हर दुख की दवा है। और उसका नाम है काम। काम करते रहो तो दुख का राच्छस पास नहीं फटकता।"

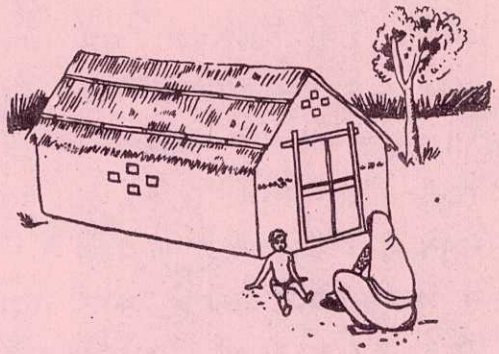

दुलहिन अपनी जिठानी से अक्सर ऐसी बातें किया करती थी। धीरे-धीरे रधिया का मन बहलने लगा। घर में रोटी-पानी, गाय-बैलों का जितना काम था, सब उसने सम्हाल लिया। एक दिन दाल बीनते-बीनते बोली, "दुलहिन, हमारा कहीं पढ़ने का डोल हो तो बताओ?" "अरे जीजी, तुम पढ़ोगी?" सुनते ही दुलहिन उछल पड़ी।

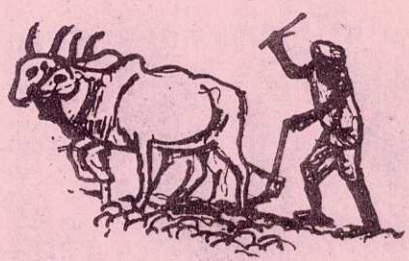

गांव में कुछ दिनों से प्रौढ़-पाठशाला खुल गयी है। १५ बरस से ३५ वर्ष के लोगों को पढ़ाना सिखाया जाता है। रधिया की अभी उमिर ही क्या है? यही तीस-बत्तीस की होंगी। फिर इस नयी पाठशाला में खाली लिखना-पढ़ना ही नहीं, दूसरी काम की बातें भी सिखाई जाती हैं। मरदों के लिये तरह-तरह के काम हैं तो औरतों के लिए भी काम की कमी नहीं

है। सिलाई, बुनाई, कढ़ाई, अचार, पापड़, मसाले बनाना, यह तो ठहरे पुराने काम। बहुत से नये काम सुरू हो गये हैं। नयी किसम का चरखा, जिसमें एक साथ चार सूत निकलते हैं। अपने घर की खड्डी पर कपड़ा बुनना। कालीन बनाना। जंगली घास और मूंज से चटाई, टीकरी बनाना। मिट्टी,-कपड़े से तरह-तरह के खिलौने, गुड़िया। कोई एक काम है जो बताया जाये। और हां नर्स-दाई का काम औरतों के लिए नया खुला है। अब प्रौढ़ पाठ शाला में साथ-साथ दाई का काम नये तरीके से सिखाया जाता है। छः महीने लगते हैं, लेकिन शर्त है कि पहले से लिखना-पढ़ना आना चाहिए। अरे गांव में किसके-कितने बच्चे हैं, कौन नया पैदा हुआ, इसका हिसाब भी तो रखना है। बच्चों की देखभाल कैसे करें, क्या खिलाएं, यह भी जानना जरूरी है।

रधिया बड़े ध्यान से इन बातों को सुनती। एक दिन सास से बोली, "अम्मां, घर का काम तो दुलहिन मजे में सम्हाल लेती हैं। हमारा मन अब पाठशाला जाने का है।" अम्मां दुलहिन के कामों में पढ़ाई का चमत्कार देख चुकी थी। बीच-बीच में ग्राम सेविका भी घर पर आकर उन्हें नयी तालीम के लाभ समझाती रहती थी। अम्मां की तरफ से ना करने का सवाल ही नहीं था। फिर एक दिन दुलहिन जाकर जोजी को पाठशाला छोड़ आयीं।

देखते-देखते साल बीत गया। रधिया अच्छी तरह लिखना-पढ़ना सीख गयी। छोटे-छोटे सवाल जोड़, गुणा, बाकी, अब खुद ही निकालने लगीं। न समझ पातीं तो गोपी से पूछ लेतीं। धीरे-धीरे गोपी-गिरधार की किताब-कापी टटोलने का चस्का उन्हें लग गया और बच्चों के साथ वे खुद भी वही सब पढ़ने लगीं। एक किताब की पीठ पर से उन्होंने पढ़ा, "जन गण मन अधिनायक जय हे भारत भाग्य विधाता।" फौरन गोपी से पूछने लगीं, "बेटा यह क्या है ?"

"अम्मा यह हमारा राष्ट्र-गीत है। सहर में तुझे हमने तिरंगा झंडा दिखाया था। २६ जनवरी, १५ अगस्त को सरकारी दफ़्तर पर लहराता था। याद है अम्मां। हमारे देश की पहचान जैसे झण्डे से होती है,

वैसे ही इस गीत से।" अरे धरती की पहचान झण्डे से कैसे होगी। धरती को जोतो, बोओ, फसल काटो, तभी तो पहचान होगी ?'

"नहीं अम्मा। जिस गांव में हम रहते हैं, जिस सहर से हम आये हैं, वही हमारी धरती नहीं। बहुत बड़ी है, हिमालय से कन्याकुमारी तक।"

रधिया ने ये शब्द जिन्दगी में पहली बार सुने थे। गोपी उसे समझाने बैठ गया। तेरह-चौदह का हो रहा था। बिना बाप का था इसलिये था मेहनती समझदार। जमीन पर खड़िया से उसने भारत का नक्शा खींचा। "देख अम्मां, यह है भारतमाता। जैसे तुम मेरी माता है, वैसे ही यह हम सब की माता है। इसी की गोद में हम पलते हैं, इसी का दिया हम खाते हैं। देख अम्मां ! यह रही गंगा मैया, और यह रही जमना। और यह रहा हिमालय जहां से यह दोनों बहनें निकलती हैं।"

"बेटा, नदियां पहाड़ों से क्यों निकलेंगी ?"

"अम्मां, इसलिये कि पर्वत बहुत ऊंचे हैं। उनके ऊपर बर्फ जमी रहती है। यही बर्फ जब पिघलती है तो नदी बन कर नीचे उतरती है। अम्मां गंगा और जमना हिमालय की बर्फ हैं, भगवान ने इनको हमारा पीने का पानी लेकर हमारें पास भेजा है।"

"हां बेटा, तू सच कह रहा है। वहीं कहीं सिवजी कैलास पर्वत पर रहते हैं। गंगा मैया को सिवाजी ने ही भेजा है। मन्दिर में पुजारी जी बताया करते हैं।"

मां की बात सुनकर गोपी मन ही मन हंसा। "अम्मां चाहे सिव कहलो, चाहे भगवान, हैं दोनों एक ही।"

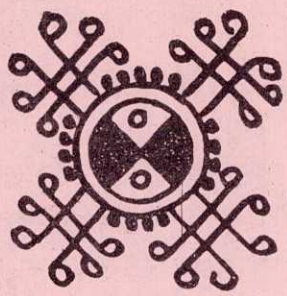

आठ

बच्चों से बातें करते, उनकी किताब-कापी देखते रधिया अपने देश के बारे में बहुत कुछ सीख गयी। उसके सामने भारतवर्ष की तस्वीर साफ होने लगी थी। स्कूल से लौट कर गिरधर तो खेल में लग जाती। चाची को साइकिल चढ़ते देखती तो उसे भी इच्छा होती। "अरी, तू गिर पड़ेगी, बेकार हाथ-पैर तोड़ घर पर बैठ जायेगी।" दुलहिन समझाती। लेकिन गिरधर कहां मानने वाली थी। इतने बरस सहर में रही, साइकिल की शक्ल भी नहीं देखी थी। हां सड़क पर मरदों को साइकिल पर जाते देखती थी और सिमलाल चाचा भी कभी-कभी साइकिल ठीक करते दिखायी पड़ते थे। पुरानी साइकिल थी। बेचारों की कभी चेन टूटी है तो कभी पैडल गायब। टूटे तसले में पानी भर लगभग रोज ही पैंचर बनाया करते थे।

सहर में वह और गोपी गरीब थे, नौकरों के बच्चे। कौन उनको पूछता। कमेटी के स्कूल में जमीन पर गीले टाट पर बैठ कर पढ़ते। जबकि पास-पड़ोस के बच्चे सुन्दर ,चमकती पोशाकें पहन अंगरेजी स्कूल में जाते। कैसी आपस में गिटपिट-गिटपिट बात करते। जबान थी कि कैंची, बन्द होने में ही नहीं आती थी। गिरधर की समझ में कुछ न आता। एकाध बार वह उनको करीब से देखने गयी थी। पहले तो उसने सोचा था--होंगी ये भी बिलायती गुड़िया। चंवल बाबू की बिटिया के पास भी तो ढेर सारी गुड़िया थीं। बिल्कुल ऐसा ही बादल जैसी फराक पहने।

चंचल बाबू हर साल बिलायत जाते थे। एक-एक करके कितनी गुड़िया इकट्ठा हो गयी थीं। बाप-रे-बाप। मेमसाहब को एक पूरी सीसे की अलमारी खरीदनी पड़ी थी उनके लिये। खूब सजा कर रखा था उन्हें। कुतूहल के मारें एक दिन गिरधर जरा उन बच्चों से ज्यादा ही करीब चली गयी। एक लड़की ने उसे पास आते देखा तो आंख सिकोड़ी, नाक पकड़ी

और दूर हट गयी। उसके साथ खड़ी दुतकार कर बोली, "अरी ओ लोंडिया, देखती नहीं इहां बाबा लोग बैठा है। हट परें को, दूर जा। और गिरधर डर के मारे धड़कता हुआ दिल लेकर घर लौट आयी थी। उसका कुतूहल अभी तक शान्त नहीं हुआ था कि सहर की गुड़ियों की असलियत क्या थी? पर इतना तो वह समझ ही गयी थी कि वह उन लोगों के बराबर की नहीं। उनसे नीची है। तभी तो उनके बराबर की भूमि पर खड़ी नहीं हो सकती।

यहां गांव में वैसा ऊंच-नीच नहीं था। हां, किनारे पर कुछ चमारों के घर थे, पर स्कूल में उनके बच्चे भी आते थे। सबके कपड़े एक समान, चेहरे एक समान। सबका आदर एक समान, सब की बोली एक समान। सच में गांव में आकर गिरधर तो बहुत खुश थी। यहां सब उसे प्यार से अपने पास बुलाते, कोई दुत्कारता नहीं। अम्मां दोनों बेर गरम रोटी खाने को देती। सहर में तो सुबह की बनाई रात, और रात की बनाई सुबह खाने को मिलती थी। और अम्मां ही कहां दिन भर रहती थीं। काम से उन्हें कहां फुरसत थी। दिन भर मेमसाहब की टहल। उनकी बिटिया की देखभाल। कभी आयी भी तो फट चली गयीं। नहीं भाई, हमें सहर नहीं चाहिये। गांव ही अच्छा है। और यहां साईकिल भी तो है। दुलहिन चाची जरूर उसे साइकिल सिखा देंगी।

सचमुच हफ्ते भर में गिरधर साइकिल चलाना सीख गयी। स्कूल से लौटते ही अब वह साइकिल उठाती और खेत का चक्कर पूरा कर लौटती। कहीं पेड़ के नीचे बैठे बाबा मिल गये, तो वहीं बैठ जाती। फिर संझा को बाबा-पोती घर लौटते। लम्बी पतली टांगों से पोती पैडल मारती। बाबा पीछे कैरियर पर। एक हाथ में जूती थामे, दूसरे से पगड़ी सम्हाले।

दिन बीतते क्या देर लगती है। कस्बे में अस्पताल की पढ़ाई खतम करके पोलू घर लौट आया। अब वह घूम-घूम कर गांव में बीमारों को देखता। दवाई देता। उन्हें सफाई से रहना बताता। खाने की हिदायतें देता। गंभीर रोगियों को कस्बे के अस्पताल भेजता।

नौ

साल बीतते-बीतते रधिया ने पढ़ना-लिखना सीख लिया था। अब वह दाई का काम सीख रही थी। गांव में परिवार-नियोजन वाले आते तो वह अपने घर के आंगन में औरतों की सभा बुला लेती। उन्हें छोटे परिवार के लाभ समझाने में सहायता करती। पोलू अक्सर जब गर्भवती महिलाओं को देखने जाता तो बड़ी भाभी को साथ ले लेता।

इस तरह काम करते पूरे सात साल बीत गये। इस बीच पोलू ग्राम-चिकित्सकों के कई शिविरों में हो आया था। पहला शिविर जब रामपुर में लगा तो वाराणसी से लेकर पटना तक के देखने लायक स्थान सीखने वालों को दिखाये गये। बड़ी भाभी के लिये पोलू काशी से शिव जी की मूरत ले आया था। बनारसी पीतल का एक सिंहासन भी, भगवान जी की मूरत के लिये। पटना से अम्मां के लिये सींकों का बना सूप लाया था। बरेली में जब शिविर लगा तो वहां से सुरमा और लकड़ी के आसन लेता आया था। इन छोटी-छोटी चीज़ों को देख कर दुलहिन, रधिया, गोलू, गोपी, गिरधर सब को लगता हमारा देश कितना बड़ा है। कैसी-कैसी चीज़ें वहां होती हैं।

एक बेर पोलू तीरथ के लिये बड़ी भाभी को हरिद्वार ले गया। वहां हर की पैड़ी पर तरह-तरह के लोग, तरह-तरह की बोलियां। सुन कर रधिया तो दंग रह गयी। बजार में कैसी सुन्दर चीज़ें बिक रही थीं। और गंगा जी के उस पार पर्वतों का दृश्य। गोपी ने बताया था यही हिमालय पर्वत है। रधिया ने सब के लिये शंखों की माला खरीदी। बाबू के लिये पर्वतीय बांस का मोटा डंडा। अम्मां के लिये बड़ा सा पूजा का शंख लाई। कन्याकुमारी का था यह शंख ! हां, वहीं का जहां राम जी ने लंका जाने के लिये पुल बांधा था।

गांव में भूमिसुधार हो रहा था। जमींदार कबके मर चुके थे। जमीन की नयी लिखा-पढ़ी करने के लिये चंचल बाबू गांव आये। खबर मिलते ही बाबू ने गोलू-पोलू को चंचल बाबू के पास भेजा। रामू किसना की खबर लाने। चंचल बाबू ने बताया-रामू तो जिस दिन से मेरी को लेकर गया, उसका पता ही नहीं चला। सुनते हैं किसी फिल्म वाले के चक्कर में बम्बई चला गया। मेरी को नाच गाने का सौक लग गया था। वही उसे ले गयी। जिन्दा है या मर गया कुछ पता नहीं।

और किसना ? जुए में हार गया तो एक दिन यार दोस्तों में मारपीट हो गयी। एक आदमी के सिर में ऐसी चोट आई कि प्राण निकल गये। यार दोस्त तो निकल भागे, किसना को पुलिस ने पकड़ लिया। सात साल की सजा हुई थी, जुआ खेलने के जुर्म में। फिर आदमी भी तो मर गया था। चंचल बाबू ने बताया, किसना की सजा पूरी होने वाली थी। दो-चार दिन में ही वह जेल से छूटने वाला था।

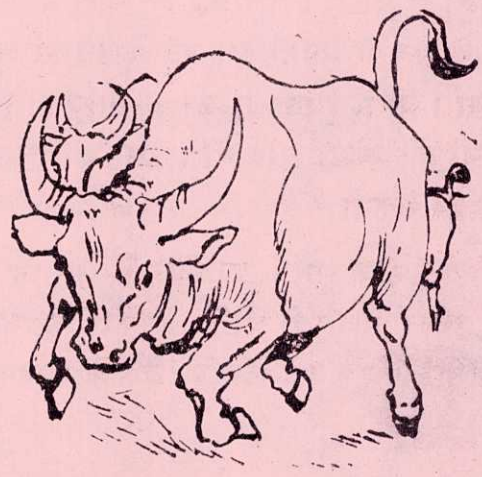

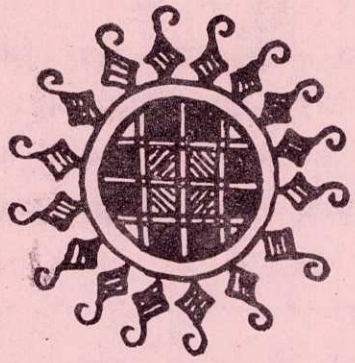

दस

गोलू ने घर लौट कर खबर अम्मां-बाबू को दी। उनके बूढ़े हृदय में एक ओर रामू की उदासी, दूसरी ओर किसना से मिलने की आस। जैसे बरखा की बूँदों में चमकता इन्द्रधनुष। दुलहिन ने सुना तो चुप रही। कुछ न बोली। पूरा दिन पूरी रात कुछ सोचती रही। अगले दिन बड़े सबेरे पोलू को लेकर चंचल बाबू के घर गयी। उनसे जेल का पता ठिकाना पूछा। घर लौट आयी। अम्मां से सहर जाने की आज्ञा मांगी। "तुम डरो मत अम्मां, पोलू मेरे साथ रहेगा। उन्हें मुझे ले आने दो!

"अम्मां-बाबू के मन में अपनी इस बहू के साहस और बुद्धिमानी पर ढेरों प्यार उमड़ आया। बोले, "बेटी तू जा। सतयुग में सावित्री जमराज के मुख से अपने आदमी को लौटा लाई थी। इस कलियुग में तू क्या अपने मरद को जेल से नहीं ला सकती?"

दुलहिन और पोलू ठीक समय पर जेल के सामने पहुंच गये। चंचल बाबू ने मेमसाहब को खबर भेज दी थी। उनकी सहायता से जगह ढूंढ़ने में ज्यादा दिक्कत नहीं हुई। ११ बजे दिन के, जेल के फाटक खुले और किसना बाहर आया।

कितने बरसों बाद दुलहिनियां उसे देख रही थी। आंखें उदास, बाल रूखे, शरीर जर्जर। क्या यह वही किसना था? वह सपना तो नहीं देख रही थी? आज वह मांग भरे, लाल छाप की साड़ी पहने थी। हाथों में भर भर चूड़ियां, माथे पर टिकुली और कानों में वही बालियां

जो किसना चलते बखत पहना गया था। वह छन याद आते ही दुलहिन का चेहरा गरम होने लगा । पलकें झुकने लगीं। पर किसना, वह तो जैसे उन लोगों को देख ही नहीं रहा । खाली-खाली आंखें सामने उठाये फाटक से निकल कर खड़ा है जैसे रास्ता भूल गया हो। दुलहिन ने पोलू की तरफ इशारा किया 'यही हैं तेरे भय्या !' धीरे से बोली। पोलू सचमुच भाई को पहचान न सका था। भौजी के दिखाते ही, दौड़ कर किसना के गले लग गया। "भय्या ! घर चलो। भौजी लिवाने आयी है।'

किसना ने दूर खड़ी दुलहिन को भरपूर आंख उठा कर देखा। चूनर में लिपटी कैसी चमक रही थी, जैसे अभी ब्याह कर लाया हो। सच्ची भारतीय नारी थी वह। उसके सब अपराध माफ कर अब उसे लेने आयी थी। उसका दिल भर आया। आंखों से झरझर आंसू बहने लगे। पोलू को छाती से लगाये डगमगाते कदमों से दुलहिन की ओर चल पड़ा।

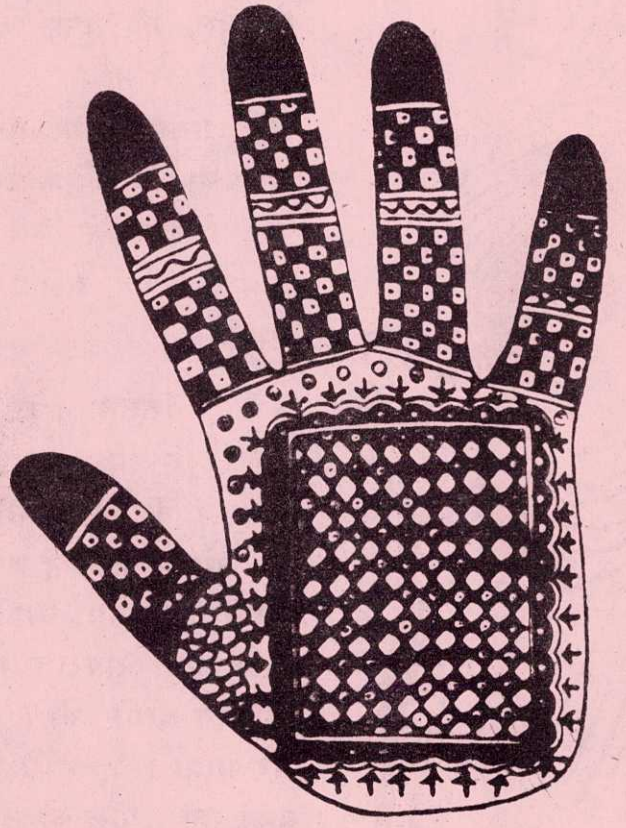

ग्रामीण साहित्य माला के अन्य पुष्प

1.	बिटिया का गीत	शिवगोबिन्द त्रिपाठी
2.	मेरे खेत में गाय किसने हांकी ?	जोगेन्द्र सक्सेना
3.	नयी जिन्दगी	गणेश खरे
4.	समाज का अभिशाप	ब्रह्म प्रकाश गुप्त
5.	कल्याण जी बदल गये	अ० अ० अनन्त
6.	एक रात की बात	इन्दु जैन
7.	जीवन की शिक्षा (लोक कथाएं)	नारायण लाल परमार
8.	आग और पानी	डॉ० प्रभाकर माचवे
9.	शहर का पत्र गाँव के नाम तथा ब ढ़ ते क द म	डॉ० योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण' विमला लाल